हिन्दू संस्कारों के बदलते स्वरूप : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन
(कुशीनगर जनपद के गुरूवलिया गाँव के हिन्दू परिवारों के विशेष संदर्भ में)

डॉ0 शम्भू प्रसाद*

भारतीय संस्कृति के निश्चित प्रवाह में जिन अवधारणाओं ने शनै–शनै एक निश्चित स्वरूप ग्रहण करके भारत के मानव–जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है और जो हिन्दू धर्म का एक अनिवार्य अंग बन गई, उनमें से एक अवधारणा– *'संस्कार'*–की थीं। *डॉ. राजबली पाण्डेय* [1] के अनुसार, भारत में संस्कार का उदय सुदूर अतीत में हुआ था और काल–क्रम से अनेक परिवर्तनों के साथ वे आज तक जीवित है। अतः संस्कारों द्वारा मनुष्य की मानसिक अध्यात्मिक एवं शारीरिक शुद्धि होकर समस्त जीवन के उत्थान की अद्भूत परम्परा प्रस्तुत होती है। इस प्रकार संस्कार धर्म पर आधारित वे पद्धतियां है, जिसके द्वारा व्यक्ति के जीवन को परिशुद्ध व पवित्र बनाने का प्रयत्न किया जाता है, जिससे कि वह मुक्ति या मोक्ष की दिशा में अधिक अग्रसर हो सकें।

हमारे समाज में संस्कारों के इस लम्बे इतिहास और व्यापक प्रभाव का मूल कारण वह भारतीय दर्शन है जो नैतिकता, अधात्मिकता तथा हृदय की शुद्धता के द्वारा व्यक्ति का समाजीकरण करने पर बल देता है। हिन्दूओं के जीवन को अनेक ऋणों और दायित्वों से युक्त माना गया है, ऐसा विश्वास किया जाता है। कि इन ऋणों से उऋण होने के लिए व्यक्ति यज्ञों को तब तक पुरा नही कर सकता, जब तक आंतरिक रूप से पवित्र न हो जाए। संक्षेप में कहा जा सकता है कि व्यक्ति को पवित्र बनाने वाले अनुष्ठानों रीटेस अथवा प्रतिकात्मक धार्मिक क्रिया–कलापों को ही हम संस्कार कहतें है। यद्यपि विभिन्न आश्रमों मे माध्यम से भी व्यक्ति के शारीरिक मानसिक तथा नैतिक विकास पर बल दिया गया है, लकिन इस स[illegible] ध्यान रख[illegible] व्यक[illegible]वन की एक विशेष अवधि में व्यक्ति को विशेष [illegible] महत्वपूर्ण [illegible]स्थिति में व्यक्ति को उसके दायित्वों [illegible]। अ[illegible]व्यवस्था पारलौकिक जगत की सफलता [illegible] के अनुकूलन पर बल देते है।

[illegible]– पुराना, एक–एक पल में बदले जमाना।'' [illegible] से संस्कृति का जन्म होता है। जब हिन्दू संस्[illegible]श्यम[illegible]गा। हमारी नयी पीढ़ी आधुनिक[illegible] ऊपर से विदेशी चैनलों द्वारा अपस[illegible]ी संस्कृति घायल हो रही है। और हि[illegible]ग कर नया स्वरूप धारण करते जा[illegible]ा के उमंग का औपचारिक प्रदर्शन [illegible]यन एक प्रासंगिक विषय है। यद्यपि [illegible]पि दत्तों की गवेषणा प्राथमिक रूप से की गयी है अ[illegible]

सैद्धन्तिक परिप्रेक्ष्य

संस्कार शब्द अ[illegible] कोई भी [illegible]ह धार्मिक क्रिया है जिससे अनेक कर्मकांण्ड और धार्मिक विश्[illegible]होते है। इस[illegible]परित संस्कार का संबन्ध व्यक्ति के आत्मिक शुद्धिकरण और उसे अपने [illegible] दायित्वों का बोध [illegible]राने से है। इसके पश्चात् भी प्रत्येक संस्कार में कुछ अनुष्ठानों और कर्मकाण्डों का समावेश अवश्य पाया जाता है। यद्यपि अनेक धर्मशास्त्रों में संस्कारों के विधानों को भी अलौकिक पृष्ट्रिभूमि में स्पष्ट किया जात है, लेकिन *डॉ. नागेन्द्र*[2] का विचार है कि, संस्कारों की उत्पत्ति के मूल में मानवीय प्रवृत्तियों का हाथ है। यह आख्यानों के निर्माण की प्रवृत्ति का ही दूसरा रूप है। स्पष्ट है कि संस्कार पूर्णतया धार्मिक नही होते बल्कि ये एक सामाजिक धार्मिक सम्प्रत्यय (Socio Religen Concepts) है, जिसकी अभिव्यक्ति हमारे सांस्कृतिक जीवन में होती है।

* **असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, उदित नरायण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पड़रौना, कुशीनगर**

विश्व में सम्भवतः ऐसा कोई समाज नही मिलेगा जिसमें कुछ संस्कार और संस्कारों से सम्बन्धित कुछ कर्मकाण्ड, अनुष्ठान तथा आचार–विचार न पाये जाते हो। वास्तविकता तो यह है कि जो संस्कृति जितनी अधिक प्राचीन होती है उसमें संस्कारों का महत्व भी उतना ही अधिक होता है। यह समाज चाहे पश्चिम का– भौतिकवादी समाज हो या पूर्णतया एक आदिम समाज, इसमें जीवन के कुछ विशेष स्तरों पर संस्कारों की विद्यमानता अवश्य ही मिलेगी। इतना अवश्य है कि भरतीय जीवन में संस्कारों का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है और इनका उल्लेख स्मृतियों से लेकर गृह–सूत्रों तक में होता आया है। भारतीय जीवन में विभिन्न संस्कार हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग रहे है। इसमें अनेक सामाजिक तत्व इस प्रकार समायें हुए है कि सामाजिक उपयोगिता के दृष्ट्रिकोण से भी इन्हें महत्वपूर्ण माना जाता है। जैविकीय आधार पर संस्कारों का उपयोगी कहना कहाँ तक उचित है? इस प्रश्न पर हम आगे विचार करेगे, लेकिन इतना आवश्यक है कि परम्परागत रूप से हिन्दू संस्कार जीवन में सफलता प्राप्त करने तथा अस्तित्व का समुचित विकास करने के लिए आवश्यक माने जाते रहे है।

संस्कारो का अर्थ

'संस्कार' शब्द अनेक प्रकार से व्यख्यादित किये जाते है। पाश्चात्य् विचारकों मे से अधिकांश विद्वानों ने– *'सैरेमनी'* तथा *'राइट'* जैसे शब्दों के द्वारा समझने का प्रयास किया है। परन्तु ये दोनों ही शब्द संस्कार की भावना को स्पष्ट नही कर पाते *डॉ. राजबली पाण्डेय*[3] का कथन है कि, संस्कार का अभिप्राय केवल–धार्मिक क्रियाओं, अनुष्ठानों, व्यर्थ के आडम्बरों, कोरे कर्मकाण्डों, राज्य द्वारा निर्दिष्ट चलनों, औपचारिकताओं तथा अनुशासित व्यवहार से नहीं है, 'संस्कार' शब्द का अधिक उपयुक्त पर्याय अंग्रेजी का–*सेकामेण्ट*–शब्द है जिसका अर्थ है–*'धार्मिक विधि–विधान'* अथवा वह कृत्य जो आन्तरिक तथा आत्मिक सौन्दर्य का बाह्य तथा दृश्य प्रतीत माना जाता है।

संस्कृत साहित्य में संस्कार शब्द का अर्थ विविध रूपों में मिलता है यथा– शिक्षा, प्रशिक्षण, सौजन्यता, पूर्णता, परिष्कार, शुद्धिकरण, धार्मिक विधि–विधान, धारणा, कार्य का परिणाम तथा क्रिया की विशेषता आदि। यद्यपि साधारण रूप से यह विभिन्न अर्थ एक भ्रमपूर्ण स्थिति पैदा कर देती है लेकिन गहराई से देखा जाता है कि ये सभी व्यक्ति के परिष्कार (रिफीनमेण्ट) शुद्धता तथा प्रशिक्षण की ओर संकेत करते है इसी आधार पर *जैमिनीमीमांसा*[4] सूत्र में कहा गया कि, संस्कार वह है जिसके करने से कोई पदार्थ उपयोगी बन जाता है।

डॉ. राजबली पाण्डेय[5] ने संस्कार शब्द के विभिन्न अर्थ होने के कारण कहा है कि, संस्कार शब्द के साथ विलक्षण अर्थो का योग हो गया है, जो इसके दीर्घ–इतिहास–क्रम में इसके साथ संयुक्त हो गये है। इसका अभिप्राय शुद्धि की धार्मिक क्रियाओं तथा व्यक्ति के दैहिक, मांसिक और बौद्धिक परिष्कार के लिए किये जाने वाले अनुष्ठानों में से है, जिनसे वह समाज का पूर्ण विकसित सदस्य हो सके। किन्तु हिन्दू–संस्कारों में अनेक आरम्भिक विचार धार्मिक–विधि–विधान उनके सहवर्ती नियम तथा अनुष्ठान भी समाविष्ट है जिनका उद्देश्य केवल औपचारिकता दैहिक संस्कार ही न होकर संस्कार व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार, शुद्धि और पूर्णता भी है। साधारणतः यह समझा जाता था कि सविधि संस्कारों के अनुष्ठान से सुसंस्कृत व्यक्ति मे विलक्षण तथा अवर्णनीय गुणों का प्रादुर्भाव हो जाता है। संस्कार शब्द का प्रयोग इस सामूहिक अर्थ में होता है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि –संस्कार शब्द का प्रयोग अनेक अर्थो में किया जाता है। संस्कार का शब्दिक अर्थ–शुद्धि, सुधार या सफाई है। अतः हम कह सकते हे कि जीवन को परिशुद्ध करने के लिए समुचित ढ़ंग से किये गये कार्य पद्धति को ही–संस्कार कहते है। इस शब्दिक अर्थ के आधार पर ही हिन्दू संस्कार से आत्मा की परिशुद्धन समझते है। संस्कार वे कृत्य है जो परम्परागत रूप में जन्म से लेकर मृत्यु तक हिन्दुओं मे आवश्यक होते है, क्योंकि इसके विना जीवन की परिशुद्धि वथा आत्मा की उन्नति सम्भव नहीं है।

हिन्दूओं का सम्पूर्ण जीवन इन्हीं संस्कारों से घिरा हुआ होता है जो कि व्यक्ति के जन्म से पहले ही आरम्भ हो जाता है और इस अर्थ में कि बच्चा उत्पन्न होने से पहले ही गर्भवती माँ को अनेक प्रकार के संस्कारों को करना पड़ता है। संस्कार को इतना महत्व दिया जाता है और विश्वास किया जाता है कि संस्कार के लिए बिना व्याक्ति का जीवन कदापि पूर्ण नहीं होता। आत्मा की परिशुद्धि और जीवन

बाधामुक्त करना ही संस्कार का मुख्य उद्देश्य होता है। अनेक संस्कारों मे यज्ञ या हवन का विधान है। उसी प्रकार संस्कार में उपकरण के रूप में अग्नि, जल और मंत्र आदि को काम में लिया जाता है। जिससे अशुभ का नाश और शुभ का शुभागम हो। मंत्रो का उच्चारण, दण्ड का धारण, पुरोहित द्वारा देव रूप में आर्शिवाद देना इन सभी का उद्देश्य अशुभ का नाश है। दूसरी ओर पुरोहित द्वारा शुभ घड़ी में अनुष्ठान, देवी–देवताओं, पितरों का आमंत्रण मंत्रों का उच्चारण पाठ आदि के माध्यम से शुभ शक्तियों का आवाहन भी किया जाता है। जिससे व्यक्ति का जीवन न केवल परिशुद्ध हो बल्कि बाधा–बिध्न से विमुक्त हो। अतः स्पष्ट है कि आत्मा को परिशुद्ध करने एवं जीवन को विध्न–बाधाओं से विमुक्त करके उसे अधिक उन्नत्तशील बनाने के धार्मिक–सामाजिक कृत्यों को संस्कार कहतें है।

हिन्दू संस्कारों के उद्देश्य

हिन्दू संस्कारों के पीछे वास्तविक उद्देश्य क्या है? यह एक विवादपूर्ण प्रश्न है। एक ओर इन संस्कारों का प्रादुर्भाव इतनें प्राचीन समय में हुआ कि तब से लेकर आज तक इनमें तरह–तरह के विश्वास जुड़तें चले आ रहे है और दूसरी ओर इन संस्कारों को कर्मकाण्ड मात्र समझने का प्रयत्न भी बहुत कम किया जाता है। इसके उपरान्त भी संस्कारों के प्रमुख उद्देश्य अथवा प्रयोजन को संक्षेप में निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है–

1. **मानव के सरल मन तथा उनकी सांस्कृतिक विशेषताओं को प्रतीकात्मक रूप से अभिव्यक्त करना–** संस्कारों का सबसे महत्त्वपूर्ण उद्देश्य मानव के सरल मन तथा उनकी सांस्कृतिक विशेषताओं को प्रतीकात्मक रूप से अभिव्यक्त करना है लैंगर का भी यही विचार है कि संस्कार मृत्यु से संबन्धित संस्कारों को छोड़कर हर्ष और आनन्द को ही प्रतिकात्मक रूप से अभिव्यक्त करते है जिससे मनुष्य के मन को स्नेह, अनुराग, प्रेम तथा बात्सल्य जैसी प्रवृत्तियों को संतुष्ट करने के अधिकतम अवसर प्रदान किये जा सके।
2. **अशुभ शक्तियों से व्यक्ति की रक्षा करना–** संस्कारों का दूसरा उद्देश्य अशुभ शक्तियों से व्यक्ति की रक्षा करना है। हिन्दू जीवन में भूतों पिसाचों तथा बलि की व्यवस्था करने की रीतियाँ चली आ रही है। लगभग सभी संस्कारों में इस प्रकार के क्रियाकलाप किये जाते है जिससे यह अशुभ शक्तियां व्यक्ति पर अपने चमत्कारी प्रभाव का प्रयोग न कर सके। इसी कारण सभी संस्कारों की पूर्ती में जल और अग्नि जैसे पदार्थो का उपयोग अशुभ शक्तियों के प्रभाव को निष्क्रिय बनाने के लिए किया जाता है।
3. **अभिष्ट वस्तुओं की प्राप्ति–** यह संस्कारों का तीसरा उद्देश्य है। जिस प्रकार व्यक्ति को अनिष्टकारी शक्तियों से दूर रखने का प्रयत्न किया जाता है, उसी प्रकार संस्कारों के द्वारा उन शक्तियों को प्रसन्न रखने का भी प्रयत्न किया जाता है जो व्यक्ति को समृद्ध तथा लक्ष्य प्राप्ति में सहायता दे सके। विभिन्न संस्कारों के समय सभी प्रमुख देवताओं के साथ एक प्रमुख देवता की अराधना व अर्चना करना इसी उद्देश्य की ओर संकेत करता है। विभिन्न संस्कारों में भिन्न–भिन्न देवताओं की आराधना के पीछे अनेक प्रतिकात्मक महत्व की भावना जुड़ी हुई है। उदाहरण के लिए, विष्णु सृष्टि के रक्षक माने जाते है और इसलिए गर्भाधान संस्कार के समय प्रमुख रूप की आराधना की जाती है, जिनसे जन्म लेने वाले बच्चें का जीवन पूर्णयता सुरक्षित बना रहे।
4. **व्यक्ति में नैतिक गुणों का विकास करना–** संस्कारों का एक अन्य उद्देश्य व्यक्ति में नैतिक गुणों का विकास करना है। संस्कार अपने आप में एक लक्ष्य नहीं है बल्कि यह एक साधन है, जिसके द्वारा व्यक्ति में नैतिक गुणों का विकास करने के लिए प्रयत्न किया गया है। प्रत्येंक संस्कार व्यक्ति के दायित्वों को नैतिक आधार पर स्पष्ट करता है। उदाहरण के लिए सिमान्तोन्नयन संस्कार के द्वारा गर्भिणी के कर्तव्यों तथा उपनयन संस्कार के समय ब्रह्मचारी के कर्तव्यों को स्पष्ट करना यह सूचित करता है कि संस्कारों का उद्देश्य निश्चय ही व्यक्ति के नैतिक तथा सामाजिक दायित्वों को स्पष्ट करना रहा है।
5. **अध्यात्मिकता के महत्व को स्पष्ट करना–** संस्कारों का यह पाँचवा उद्देश्य आध्यात्मिकता के महत्व को स्पष्ट करना है। भारतीय सामाजिक जीवन का मूल आधार ही अध्यात्मवाद है। सभी संस्कार आध्यात्मिक शक्ति के बाह्य प्रतीक के रूप में कार्य करके इस धारणा को विकसित करनें का प्रयत्न

करेगा कि व्यक्ति स्वयं कुछ नही है बल्कि एक अदृश्य शक्ति ही उसके जीवन को नियंत्रित किये हुए है। इस उद्देश्य के महत्व को स्पष्ट करते हुए *डॉ. पाण्डेयँ* का कथन है कि, संस्कार एक प्रकार से अध्यात्मिक शिक्षा की क्रमिक सीढ़ियों का कार्य करते थे। उनके द्वारा व्यक्ति यह अनुभव करता था कि सम्पूर्ण दैनिक क्रियाएं अध्यात्मिक ध्येय से अनुप्रमाणित है। यही वह मार्ग था जिससे क्रियाशील सांसारिक जीवन का समन्वय अध्यात्मिक तथ्यों के साथ स्थापित किया जाता था। यह कथन संस्कारों के अध्यात्मिकता सम्बन्धी उद्देश्य को स्पष्ट करते है।

संस्कारों के भेद

हिन्दू जीवन में संस्कारों की संख्या क्या है? इस विषय पर धर्मशास्त्रों में अत्यधिक भिन्नता देखने को मिलती है। एक ओर गौतम–धर्म सूत्र में संस्कारों की संख्या 40 निर्धारित की गयी है, जबकि दूसरी ओर बराह गृहसूत्र, परासर गृहसूत्र, बौधायन गृहसुत्र तथा मनुस्मृति में इनकी संख्या 13 है, जबकि आश्वलायन गृहसूत्र मे यह संख्या 11 ही निर्धारित की गयी है। व्यास ने संस्कार की संख्या 16 बतायी है।[7] वास्तविकता यह है कि संस्कारों की मान्यता पर ही आधारित है। प्रस्तुत पपत्र में हम उन 13 संस्कारों की संक्षेप में उल्लेख करेगे जो बच्चों के जन्म से पूर्व बाल्यावस्था में शिक्षा के समय विवाह के अवसर पर तथा मृत्यु के पश्चात् पूरे किये जाते है। इससे पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि प्रत्येक संस्कार का एक उद्देश्य होने के बाद भी विभिन्न संस्कारों का विधि–विधान इस अर्थ में समान है कि इन सभी के द्वारा अलौकिक शक्तियों के सानिध्य में अभिष्ट फल की कामना की जाती है। इस कार्य के लिए अग्नि प्रज्वलित करना, यज्ञ करना, स्तुतियां और प्रार्थनाएं करना, स्नान तथा आचमन, दिशा निर्धारण, फलित ज्योतिष से सम्बन्धित ग्रहों और नक्षत्रों का विचार रखना और आध्यात्मिक वातावरण के अन्तर्गत कुछ मूर्त प्रतीकों का उपयोग करना वे सामान्य तत्व है, जो लगभग सभी संस्कारों में सामान्य रूप से पाये जाते है। इस प्रकार प्रस्तुत विवेचन प्रमुख संस्कारों से सम्बन्धित है जो निम्न है–

1. **गर्भाधान संस्कार–** मनुस्मृति के अनुसार, इस संस्कार के द्वारा गर्भ की शुद्धि की जाती है। हिन्दू विवाह का उद्देश्य केवल यौन–संतुष्टि (रति) नही अपितु संतानोत्पत्ति भी है। गर्भाधान संस्कार का उद्देश्य संतान,विशेषकर पुत्र–संतान को जन्म देना है। हिन्दू धर्म के अनुसार पुत्र को जन्म देना एक पवित्र धार्मिक कृत्य माना गया है। विवाह की चौथी रात्रि में गर्भाधान करने का विधान है। यदि कोई पुरूष अपने शुक्र को विधिवत पत्नी के गर्भ में नही रखता है तो पराशर के अनुसार वह ब्रह्महत्या का भागी होता है। इसका उद्देश्य निर्बल, कूरूप, विकलांग अथवा मरी हुई सन्तान होने से बचाना हो सकता है। विष्णु पुंराण के अनुसार जिस स्त्री ने स्नान न किया हो, रोग ग्रस्त हो, आर्तावस्था में हो, क्रुद्ध हो, जो अन्य पुरूष से प्रेम करती हो, उसके साथ गर्भाधान नहीं करना चाहिए। इसके विपरीत अपनी सुशील पत्नी के साथ उसके ऋतुमती होने के चौथे या पांचवे दिन स्नान करने के उपरान्त रात्रि में यथाविधि गर्भाधान करें। इस संस्कार का आधुनिक समाज में कोई विशेष महत्व नहीं है और न ही इसका पालन किया जाता है।
2. **पुंसवन संस्कार–** जिस अनुष्ठान के द्वारा पुत्र–संतान के जन्म की कामना की जाती है उसे पुंसवन संस्कार कहतें है। मनुस्मृति के अनुसार, इस संस्कार को गर्भधारण के चौथे मास में सम्पन्न करना चाहिए। वैसे सामान्य नियम यह है कि यदि स्त्री पहली बार गर्भवती हो तो इसे तीसरे मास किया जाय, अन्यथा गर्भधारण के दो मास से आठ मास तक कभी भी किया जा सकता है। इसमें स्त्री ब्रत रखती है और नये वस्त्र धारण करती है। रात में बरगद की छाल का रस स्त्री के अंक में जलपूरित घट रखकर पति गर्भ का स्पर्श करके वीर–पुत्र की कामना करता है।
3. **सीमान्तोन्नयन संस्कार–** दुष्ट शक्तियों से रक्षा के लिए इस संस्कार द्वारा गर्भवती स्त्री के केशों को ऊपर उठाकर सवारने का विधान है। यह काम पति गर्भ धारण के चौथे मास करता है इस संस्कार के प्रारम्भ में मातृपूजन, नान्दि श्राद्ध आदि होते है। कुछ विशेष पदार्थो के साथ पति अपनी पत्नी के बालो को सवारता है।
4. **जातकर्म संस्कार–** यह संस्कार संतान के जन्म के समय किया जाता है और भी स्पष्ट रूप से बच्चे की नाभि छेदन के पूर्व जातकर्म संस्कार होता है। जब बालक का जन्म होता है तो उस समय अनेक अनिष्टकारी शक्तियों का भय होता है। उन्हीं से बचने के लिए यह संस्कार किया जाता है।

पिता अपने नवजात शिशु को देखता है, सूधता है, और लाने वाले मंत्रों का उच्चारण करता है। इसके बाद सोने की शलाका से बच्चे को शहद एवं घी अथवा मक्खन चटाया जाता है। इसी समय बच्चें की नाभि काटकर माँ तथा बच्चें को स्नान कराया जाता है। जातकर्म संस्कार की अन्य अनेक रीतियां हिन्दू समाज में पाई जाती है। जैसे बच्चा, विशेषकर लड़का पैदा होने पर अग्नि प्रज्जवलित कर दी जाती है जो कि कई दिनों तक जलती रहती है। यह क्रिया स्वभावतः भूत–बाधाओं से बचने के लिए की जाती है। उसी प्रकार सम्भ्रांत हिन्दू परिवारों में बच्चे के पैदा होती है उसकी जीभ पर सोने की बाली या सलाई से ओम् लिखने की प्रथा है।

5. **नामकरण संस्कार–** मनुस्मृति मे लिखा है कि दसवें अथवा बारहवें दिन में शूभ तिथि नक्षत्र एवं मुहूर्त देखकर बच्चें का नामकरण संस्कार किया जाना चहिए। वर्ष के अन्त में भी नाम रखा जा सकता है। नाम प्रायः नक्षत्रों, देवताओं, कुल देवता, ग्राम देवता आदि के नाम के आधार पर रख दिए जाते है। जब किसी दम्पत्ति के बच्चे जीते नहीं है तो वे किसी विशेष देवी –देवता के मन्नत करते है और उन्हीं के नाम के आधाार पर उनका नाम रख लेते है। जैसे – वंकटेश, तपेश्वरी, रामप्रसाद आदि। नामकरण संस्कार में पुजा, हवन आदि करने के बाद पुरोहित बच्चे की राशि को विचार कर निकालते है और राशि के सम्बन्धित प्रथम अक्षर के आधार पर बच्चें का नाम रख दिया जाता है। उदाहरणार्थ यदि बच्चा कन्या राशि का है तो इस राशि का एक निश्चित अक्षर 'प' के आधार पर बच्चे का नाम पबन कुमार, पवित्र मोहन, पार्थसारथी आदि रखे जा सकते है। पहले इस नाम के चुनाव में जाति का भी प्रभाव स्पष्टतः देखने को मिलता था। उदाहरणार्थ ब्राह्मण जाति के बच्चे के आगे 'सिंह' नही होगा, परन्तु क्षत्रिय जाति के बच्चों के नाम के आगे 'सिंह' अवश्य जोड़ा जाता था, जैसे–भगत सिंह, मान सिंह, बहादुर सिंह आदि। उसी प्रकार शूद्रों के नाम के आगे दास या चरण लिखने की प्रथा थी, जैसे भगवान दास, रामदास, कालीचरण आदि। पर आज इन नियमों को बहुधा नहीं माना जाता है। लड़कियों के नाम रखने के सम्बन्ध में कोई विशेष नियम नही है।
6. **निष्क्रमण संस्कार–** बच्चे के जन्म के बाद उसे एक दम घर से बाहर नहीं निकाला जाता है निष्क्रमण संस्कार के बाद ही उसे घर से बाहर निकाला जाता है। मनुस्मृति के अनुसार यह संस्कार जन्म के चौथे मास में होना चाहिए। वैसे जन्म के बारहवें दिन से चौथे मास तक कभी इस संस्कार को किया जाता है। बच्चें को माँ की गोद में देकर सबसे पहले सूर्य–दर्शन पिता कराता है और पिता की अनुपस्थिति में यह काम देवर भी करा सकता है।
7. **अन्नप्राशन संस्कार–** छः मास की आयु तक बच्चा अन्न खाने के योग्य हो जाता है तो इस संस्कार को किया जात है। अन्नप्राशन संस्कार बच्चे के द्वारा सर्वप्रथम अन्न–ग्रहण करने का सूचक है। इस अवसर पर बच्चे को अन्न के साथ धृत एवं मधु खिलाया जाता है। कहीं–कहीं चांदी के कटोरी में दुध–भात खिलाने का रिवाज भी है।
8. **चूड़ाकरण या चूड़ाकर्म संस्कार–** इसे मुण्डन या केशोच्छेदन संस्कार भी कहते है। इस संस्कार में बच्चे का बाल पहली बार मुंडे जाते है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि चूड़ाकरण से दीर्धयु प्राप्त होती है। मनुस्मृति के अनुसार चूड़ाकरण जन्म के प्रथम वर्ष के अन्त अथवा तीसरे वर्ष में किया जाना चाहिए। परासर गृह सूत्र का मत है कि जन्म के प्रथम वर्ष के अन्त में अथवा तीसरे, पाँचवें या सातवें वर्ष में इस संस्कार को किया जाय। सामान्यतः यह तीसरे वर्ष ही किया जाता है। इस संस्कार में गर्भ क समय के बालों को नाई काटता है, पर इन बालों को कहीं उड़ने नहीं दिया जाता। एक आटे की लोई में अथवा कहीं–कहीं बरगद के पत्ते पर, ये सब बाल ऊपर ही ऊपर ले लिया जाता है तथा आटे की लोई में बन्द कर इनको गंगाजी में या अन्य किसी नदी या तालाब में बहा दिया जाता है अथवा जमीन मे गाड़ दिया जाता है। इस अवसर पर नाई–विशेष नेग– निछावर लेता है। बालों के कट जाने के बाद सिर पर मक्खन या दही मलकर बच्चे को स्नान करा दिया जाता है। हवन–पूजा, भोज आदि का भी आयोजन किया जाता है। अपनी–अपनी मन्नत के अनुसार बहुत से लोग देवी के मंदिर में जाकर या किसी तीर्थस्थान पर गंगाजी या अन्य किसी पवित्र नदी के किनारे जाकर ही मुण्डन करवाते है।

9. **कर्णछेदन संस्कार–** इस संस्कार के द्वारा बच्चे का कान छेदा जाता है। पर संस्कार का प्रचलन सभी हिन्दू परिवारों में नही है फिर भी महर्षि दयानन्द ने इसको एक महत्वपूर्ण संस्कार माना है। यह संस्कार तीसरे या पाँचवें वर्ष में होता है। इस समय स्वर्णकार या नाई को बुलाकर कर्णछेदन कराया जाता है। ओर कानों में सोने की बाली पहना दी जाती है, जिससे कि कान का छेद बन्द न हो जाये। इस अवसर पर हवन–पूजा आदि के साथ बच्चे को आर्शीवाद दिया जाता है और उसे मिठाई खिलाई जाती है।
10. **विद्यारम्भ या पट्टी–पूजन संस्कार–** इस संस्कार के द्वारा विधिवत् पट्टी को पूजा जाता है और बच्चे का हाथ पकड़ कर उसी पट्टी पर परिवार का कोई मान्य सदस्य अथवा शिक्षक या पुरोहित 'ओम' या अन्य कोई देवी–देवता का नाम और उसके बाद वर्णमाला के कुछ अक्षर लिखवाता है। उसी शुभ दिन से बच्चा विद्यार्जन का काम प्रारम्भ करता है। यह संस्कार बालक के तीसरे पाँचवें अथवा सातवें वर्ष में किया जाता है। पिछले युग में गृरूगृह में जाने का रिवाज कम से कम आठ वर्ष का था जबकि बच्चा गायत्री समझने योग्य हो जाता था। कुछ ही शिक्षा का यह सबसे पहला संस्कार है।
11. **उपनयन संस्कार–** उपनयन संस्कार का हिन्दू वर्ण व्यवस्था का जाति–प्रथा में बहुत महत्व है। वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत प्रथम तीन वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य 'द्विज' अर्थात दो बार जन्म लेने वाले कहलाते है। यह विश्वास किया जाता है कि इनका जन्म एक बार माता–पिता से शरीर संयोग के फलस्वरूप होता है और दूसरा जन्म गयात्री माता और गुरू पिता से तब होता है जबकि उपनयन संस्कार किया जात है। इस संस्कार से पहले व्यक्ति चाहे वे किसी भी वर्ण या बंश का क्यों न हो, शूद्र ही होता है। उपनयन संस्कार ही उनकी स्थिति को उत्पन्न करता है। इस प्रकार उपनयन या यज्ञोपवित संस्कार ही प्रतीकात्मक रूप में उनका दूसरा जन्म है। मनुस्मृति के अनुसार गर्भ के आठवें वर्ष ब्राह्मण, ग्यारहवें वर्ष क्षत्रिय तथा बारहवें वर्ष वैश्य का यज्ञोपवीत या उपनयन संस्कार होना चहिए। शूद्रों के लिए उपनयन संस्कार का विधान नहीं है। इस संस्कार के समय बालक को गुरू संस्कारगत रूप में था प्रतीकात्मक रूप में तीन दिन अपने 'गर्भ' मे रखता है ओर उसके पश्चात् दूसरा जन्म होता है। उसी समय उसे जनेउ पहानया जाता है और उसके बाद बालक को अनेक नियमों का पालन करना पड़ता है। इस समय बालक ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश करता है। अतः वह बाल मुंण्डन कर चोटी रखता है एवं भिक्षा भी मांगता है। यह भिक्षा वह सर्वप्रथम माता या पिता से दण्ड हाथ में ले, पीले वस्त्र धारण कर, मूज का जनेउ पहनकर मांगता है। पहले जमाने में इस संस्कार के बाद बालक गुरू गृह चला जाता था जहां वह वेदों का अध्ययन आरम्भ करता था।
12. **विवाह संस्कार–** हिन्दूओं के लिए विवाह एक धार्मिक संस्कार है, क्योंकि हिन्दू विवाह का एक पवित्र एवं ईश्वर द्वारा निश्चित बंधन माना जाता । अतः इस विवाह पद्धति के अन्तर्गत कुछ ऐसे धार्मिक नियम तरीके या धार्मिक कृत्य होते है जिनको सम्पादित किया जाना विवाह की पूर्णता के लिए आवश्यक है। इन धार्मिक कृत्यों में होम, पाणिग्रहण और सप्तपदी महत्वपूर्ण है। अग्नि में मंत्र पाठ के साथ लाई का होम किया जाता हैं उसी प्रकार 'पाणिग्रहण' कृत्य के अन्तर्गत कन्या का पिता या अन्य संरक्षक हाथ में जल लेकर वेद मंत्र उच्चारण करते हुए अपनी कन्या का दान करता है और वर भी अग्नि तथा भगवान को साक्षी मानकर कन्या के हाथ को अपने हाथ में लेकर पाणिग्रहण करता है। इसके पश्चात् वर–बधु दोनों गाँठ बांध कर अग्नि के पास उत्तरपूर्व की दिशा में सात कदम एक साथ चलते है, जिसे सप्तपदी कहते है। मनु के अनुसार पूर्ण मनुष्य वही है जो पत्नी एवं बच्चों के साथ गृहस्थ जीवन व्यतीत करता है। पत्नी पुरूषार्थ की मूल है। केवल धर्म, अर्थ एवं काम ही नहीं अपितु मोक्ष भी उसके सहयोग से प्राप्त होता है। विवाहित पुरूष ही अपने कृत्यों को समुचित रूप से इस संसार में पूर्ण कर सकते है। अतः हिन्दूओं के जीवन में विवाह संस्कार एक अत्यन्त महत्वपूर्ण व आवश्यक संस्कार है।
13. **अन्तयेष्टि संस्कार–** यह मनुष्य के जीवन का अंतिम संस्कार है जिसे कि एक व्यक्ति के मृत्यु के बाद उसके पुत्र आदि करतें है। इसका उद्देश्य मृत्यु व्यक्ति के आत्मा को परलोक में शांति प्रदान करना है। बौद्धायन के अनुसार, जन्म के बाद संस्कारों द्वारा मनुष्य परलोक को जीतता है। अंत्येष्टि

संस्कार में मृत व्यक्ति के शव को शमशान में ले जाकर उसका दाह–संस्कार विधिवत् किया जाता है । अस्थियों को गंगा या अन्य नदी के जल में विसर्जित कर दिया जाता है। 13 दिन तक अशौच मनाया जाता है। श्राद्ध एवं अर्पण आदि प्रतिवर्ष करते रहने का विधान है, जिससे कि पूर्वजों की आत्मा को कष्ट न मिले। इस प्रकार यह संस्कार लोक को परलोक से जोड़ता है।[7]

हिन्दू संस्कारों का समाजशास्त्रीय महत्व

मौलिक रूप में सभी हिन्दू–संस्कार मानव विकास की एक ऐसी योजना को सपष्ट करते है। जिसकी सहायता से व्यक्ति तथा समाज के बीच सर्वोत्तम संतुलन को बनाये रखना सम्भव हो सकता था। इस दृष्ट्रिकोंण से संस्कारों का महत्व प्रमुख रूप से सामाजिक है, धार्मिक नहीं। यह सच है कि पिछले सैकड़ो वर्षो में से इसमें से अधिकांश संस्कार केवल कर्मकाण्डों और रूढ़ियों के रूप में बदल चुके है, लेकिन प्रस्तुत विवेचन में हम संस्कारो के मौलिक स्वरूप से सम्बद्ध समाजशास्त्रीय महत्व का संक्षेप में उल्लेख करेगें–

1. **व्यक्तित्व के विकास में सहायक :** सभी हिन्दू संस्कार प्रमुख रूप से व्यक्तित्व का विकास करने के सर्वोत्तम माध्यम रहे है। प्रत्येक संस्कार एक विशेष स्तर पर व्यक्ति को उसके कर्त्तव्यों का ही बोध नही कराता, बल्कि बार–बार उसके सामने जीवन में अंतिम लक्ष्य को भी स्पष्ट करता रहता है। व्यक्तित्व का समुचित विकास प्रमुख रूप व्यक्ति की मानसिक और चरित्रगत दृढ़ता पर निर्भर है। इस कार्य को करने में विभिन्न संस्कारों ने निश्चय ही महत्वपूर्ण योगदान दिया है। डॉ. पाण्डेय[8] का कथन है कि संस्कार मानव जीवन के परिष्कार और शुद्धि मे सहायता पहुँचाते है, व्यक्तित्व के विकास को सुविधाजनक करते, मनुष्य देह को पवित्रता तथा महत्व प्रदान करते, मनुष्य की समस्त भौतिक तथा अध्यात्मिक महत्वकांक्षाओं को गति देते तथा अन्त में उसे अटिलताओं और समस्याओं के संसार में सरल तथा सानन्द मुक्ति के लिए प्रस्तुत करते थे। संस्कारों के इन्हीं महत्वपूर्ण कार्यो ने हिन्दू जीवन को एक संगठित चरित्र प्रदान किया है।
2. **जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति** : संस्कारों का महत्व केवल अलौकिक जगत से ही सम्बद्ध नही है, बल्कि इन्होंने व्यक्ति की जैविकीय आवश्यकताओं से सम्बन्धित समस्याओं का भी समाधान किया हैं जिस समय स्वास्थ्य–विज्ञान और प्रजनन शास्त्र का सर्वसाधारण को ज्ञान नही था, तब अनेक संस्कार ही व्यक्ति के लिए जैविकीय शिक्षा का सर्वोत्तम माध्यम थे। उदाहरण के लिए गर्भाधान और पुंसवन संस्कार गर्भिणी की आवश्यकताओं को पूरा करके उसे वे सभी सुविधएं प्रदान करते थें, जिनकी स्त्री को उस समय सबसे अधिक आवश्यकता होती है। इसी प्रकार उपनयन संस्कार ब्रह्मचर्य को सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान देकर विवाह से पूर्व के समय को स्पष्ट करने का महत्वपूर्ण माध्यम था। इस प्रकार जैविकीय क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण समस्याओं का समाधान करने में संस्कारों ने अभूतपूर्व योग दिया है।
3. **शिक्षा के विकास में सहायक :** संस्कारो के द्वारा प्राप्त होने वाली शिक्षा को अनिवार्य रूप दने का कोई लौकिक और धर्म–निरपेक्ष साधन नही था, उस समय संस्कारों ने जीवन के प्रत्येक स्पर पर व्यक्ति के लिए शिक्षा सर्वोत्तम माध्यम के रूप में कार्य किया। यद्यपि विद्यारम्भ संस्कार प्रत्यक्ष रूप से सैद्धान्तिक और व्यवहारिक शिक्षा से सम्बन्धित है, लेकिन अन्य संस्कार भी प्रत्यक्ष रूप से, व्यक्ति की सामाजिक, पारिवारिक और नैतिक शिक्षा के ही आधार रहे है। संस्कारो ने इस शिक्षा को अनिवार्य रूप देकर केवल अनुशासिक जीवन में वृद्धि ही नहीं की, बल्कि भारतीयों के बौद्धिक तथा सांस्कृतिक स्तर को भी दृढ़ बनाये रखा। विवाह संस्कार के द्वारा मिलने वाली शिक्षा निश्चय ही हिन्दूओं के जीवन का वह दृढ़ आधार है, जिसके फलस्वरूप उनका पारिवारिक जीवन अपेक्षाकृत रूप से कही अधिक संगठित बन सका। यही कारण है कि भारतीय समाज में जनसाधारण का जीवन सैद्धन्तिक शिक्षा से अनभिज्ञ रह जाने के पश्चात् भी लौकिक ज्ञान में किसी प्रकार पिछड़ा हुआ नही रहा।
4. **समाजीकरण में सहायक :** समाजिकरण का तात्पर्य समाज की प्रत्याशाओं के अनुसार व्यक्तित्व के अनुसार व्यक्तित्व का विकास होना है। इस क्षेत्र में हिन्दू संस्कारों का योगदान सम्भवतः सबसे अधिक महत्वपूर्ण रहा हैं संस्कार वे माध्यम है जिनके द्वारा व्यक्ति धीरे–धीरे सामाजिक परिस्थितियों से अनुकूलन करता हुआ अपने वासतविक लक्ष्य तक पहुँचता है तथा इस प्रकार अपने व्यक्तित्व और

सामाजिक जीवन को संगठित बनानें में सफलता प्राप्त करता है। गर्भाधान से लेकर चूड़ाकरण तक के संस्कार व्यक्ति को अपने परिवार तथा सम्बन्धियों के स्नेह से परिचित कराते है, उपनयन से लेकर विवाह तक के संस्कार व्यक्ति को उन सामाजिक दायित्वों से परिचित कराते है, जिनके पूरा करने की उससे प्रत्याशा की जाती है। इस प्रकार संस्कार व्यक्ति तथा समाज के बीच आदान–प्रदान की सर्वोत्तम प्रणाली के रूप में कार्य करते रहे है।

5. **सांस्कृतिक और नैतिक महत्व :** हिन्दू संस्कृति की रक्षा करने और नैतिक गुणों मे वृद्धि करने में संस्कारों का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है। संस्कारों के माध्यम से समाज की सांस्कृतिक परम्पराएं स्वयं ही एक पीढ़ी से दूसरी को हस्तांतरित होती रही, और शिक्षा के अभाव में भी व्यक्ति को अपने सांस्कृतिक प्रतिमानों से परिचित होने में किसी कठिनाई का सामना नही करना पड़ा। संस्कारों का यह निश्चय ही एक प्रमुख समाजशास्त्रीय कार्य रहा है जिसके बिना कठिनता से ही किसी समाज का जीवन संगठित रह सकता है। संस्कार व्यक्ति में नैतिक गुणों का विकास करने में भी अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। सभी संस्कारो का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति मे दया, क्षमा, अनसूया, पवित्रता, मन की शान्ति, उचित व्यवहार, निर्लोभता तथा समर्पण जैसे आठ नैतिक गुणों का विकास करना है।[9] इसके अतिरिक्त विभिन्न संस्कार गर्भिणी, ब्रह्मचारी, स्नातक और गृहिणी आदि के धर्मो अथवा कर्तव्यों को निर्धारित करके भी एक नैतिक वातावरण का निर्माण करते है। डॉ. पाण्डेय[10] का कथन है कि, संस्कारों का यह स्वरूप निश्चय ही संस्कारो से प्राप्त होने वाले वैयक्तिक हित की अपेक्षा नैतिक प्रगति को सूचित करता है।

6. **अध्यात्मिक महत्व :** अध्यात्मवाद हिन्दू सामाजिक जीवन की सर्वप्रमुख विशेषता है और सभी संस्कार व्यापक रूप से अध्यात्मवाद के साधन के रूप में ही कार्य करते है। प्रत्येक संस्कार व्यक्ति के मन मे इस धारणा को प्रबल बनाता है कि कोई अदृश्य शक्ति व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित कर रही है और यह विधि विधान के बल उस शक्ति को संतुष्ट करने के लिए ही है। यही भावना संसार को सारहीन और मोक्ष को जीवन के अंतिम लक्ष्य के रूप में स्पष्ट करती है। संस्कारों के इस महत्व को स्पष्ट करते हुए डॉ. राजवली पाण्डेय[11] ने लिखा है कि, संस्कार एक प्रकार से अध्यात्मिक शिक्षा की क्रमिक सीढ़ियों का कार्य करते थे। अनके द्वारा सुसंस्कृत व्यक्ति यह अनुभव करता था कि सम्पूर्ण जीवन वस्तुतः संस्कारमय है और सम्पूर्ण दैहिक क्रियाएं अध्यात्मिक ध्येय से ही अनुप्रमाणित है यही वह मार्ग था जिसे क्रियाशील सांसारिक जीवन का सम्बन्ध अध्यात्मिक तथ्यों के साथ स्थापित किया जाता था। जीवन की इस पद्धति में शरीर और उसके कार्य एक बाधा नहीं वरन् पूर्णता की प्राप्ति में सहायक थे।

7. **आत्म अभिव्यक्ति का माध्यम :** मानव जीवन के समुचित विकास के लिए आवश्यक है कि उसके कुछ मानसिक उद्देश्यों जैसे दया, हर्ष, आनन्द, शोक और सहानुभूति आदि की सामाजिक रूप से संतुष्टि होती रही। विभिन्न संस्कार इस कार्य का सर्वोत्तम ढ़ंग से पूरा करते है। गर्भाधान से लेकर कर्णछेदन तक के सभी संस्कार माता–पिता के दया और वात्सल्य के उद्वेगों की संतुष्टि करते है, विवाह सामान्य हर्ष और सामूहिकता की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है और यहां तक कि अन्त्येष्टि संस्कार की विधि भी शोक और करूणा का दृश्य अपस्थित करके व्यक्ति को आत्मचिन्तन का अवसर प्रदान करती है। इसके पश्चात् भी सभी संस्कार इस बारे में जागरूक है कि मांनसिक उद्वेगो की यह अभिव्यक्ति सामाजीकृत रूप से होनी चाहिए और इसलिए प्रत्येक संस्कार को पूरा करते समय व्यक्ति के दायित्वों की भावना को लुप्त नही होने दिया गया है। मनोवैज्ञानिक रूप से संस्कारों का यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक कार्य हैं।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विवेचना से स्पष्ट होता है कि हिन्दू–संस्कारो ने भारतीय जीवन को व्यवस्थित बनाने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके उपरान्त भी यह ध्यान रखना होगा कि कुछ विशष परिस्थितियों के कारण वर्तमान भारतीय जीवन में कुछ विशेष संस्कारों को छोड़कर अधिकांश संस्कारों का प्रायः लोप हो चुका है।

आधुनिक समय में पाश्चात्य संस्कृति व सभ्यता के उत्तरोत्तर प्रभाव के साथ ही साथ औद्योगीकरण व नगरीकरण के फलस्वरूप धर्म का महत्व व्यक्ति के जीवन में कम होता जा रहा है।

इसका स्वभिविक परिणाम संस्कारों का महत्व घटना है। आज का हिन्दू संस्कारो को न तो अधिक महत्व देता है और न ही उसे विधिवत् मूल रूप में अनुष्ठित करता है। आधुनिक समय में अनेक संस्कारों को या तो त्याग दिया गया है अथवा उन्हें आवश्यकतानुसार संशोधित करके स्वीकार किया जाता है।

पद्धतिशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

प्रस्तुत प्रपत्र 'हिन्दू संस्कारो के बदलते स्वरूप' का उद्देश्य कुशीनगर जनपद के गरूवलिया गांव के हिन्दू परिवारों के संस्कारात्मक जीवन के बारे में समाजशास्त्रीय अध्ययन करना रहा है। साथ ही इसका लक्ष्य हिन्दू संस्कारों पर औद्योगीकरण, नगरीकरण, पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण तथा यहां तक कि 'उपभोक्तावादी संस्कृति' के प्रभाव के कारण आज अधिकांश हिन्दू संस्कार विलुप्त होते जा रहे है तथा जो प्रचलन में है, वे परिवर्तन के दौर से गुजर रहें हैं यद्यपि सामजिक घटनाओं में सत्य की खोज ही सामाजिक शोध है। अस्तु संदर्भित अध्ययन में संस्कारों के बदलते स्वरूप को समाजवैज्ञानिक विधि से जानने का प्रयास किया गया है। दत्तों के संकलन हेतु समग्र के रूप में ग्राम सभा गुरूवलिया का चुनाव किया गया है।

गुरूवलियां गाँव कुशीनगर जनपद का एक प्राचीन गाँव है जो बुद्ध की निर्वाण स्थली कुशीनगर से 20 कि.मी. पूरब, तमकही रोड़ रेलवे स्टेशन से 12 कि.मी. पश्चिम तथा बिहार प्रान्त के उत्तरी–पश्चिमी तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वी छोर पर स्थित है। कुशीनगर जनपद की पृष्ठिभूमि पर प्रकाश डाले तो यह जनपद 13 मई 1994 को देवरिया से पड़रौना जनपद के रूप में अलग हुआ। पुनः तत्कालीन प्रशासन द्वारा तथागत की निर्वाण स्थली–कुशीनगर–के नाम पर 1997 में कुशीनगर के नाम से जाना जाने लगा, जिसका जिला मुख्यालय–रविन्द्रनगर धूस– है। जिससे शोध के लिए चयनित गाँव 36 कि.मी. पूर्वी–दक्षिणी छोर पर स्थित है।

संदर्भित गाँव गुरूवलिया के इतिहास पर प्रकाश डाले तो इस गाँव में जिम्मेंदारी प्रथा प्रचलित थी राजा विजयमल यहाँ के राजा थें जिसकी वंशज आगे भी राज्य करती रही। वर्तमान समय में इस गाँव के अस्तित्व को बनाये रखने में दो संस्थाएं– श्री रावण संहिता ज्योतिष केन्द्र जिसके संचालक पं. कामाख्या पाठक जी एवं पीताम्बरा शक्तिपीठ तथा ज्यातिष शोध संस्थान जिसके संस्थापक/सचिव पं. शिवशंकर पाठक जी हैं यहाँ देश के विभिन्न क्षेत्रों के लोग आये दिन ज्योतिष के माध्यम से अपनी भूत, अपनी वर्तमान, अपनी भविष्य की जानकारी हेतु आते रहते है। जिससे इस गाँव को काफी प्रसिद्धि हासिल हुई हैं साथ ही एक बड़ी महत्वपूर्ण स्वयंसेवी संस्था तथागत ग्रामोंत्थान एवं समाज कल्याण सेवा संस्थान कुशीनारा जिसके निर्देशक डॉ. आलोक कुमार शाही जी है भी काफी प्रसिद्धि हासिल कर रही है।

यद्यपि सरकारी योजनाओं के दृष्ट्रि से यह गाँव उपेक्षा का शिकार रहा है हालांकि शिक्षा के क्षेत्र में इस गाँव में तीन प्राथमिक विद्यालय तथा लगभग पांच नर्सरी विद्यालय भी मैजूद है। श्री अन्नपूर्णा इ. का. एवं श्री बागीश्वरी रामवासी पी.जी. कालेज इस क्षेत्र में शिक्षा का अलख जगाये हुए है परन्तु राजकीय स्तर का कोई विद्यालय तथा महाविद्याल का न होने का मलाल भी इस क्षेत्र के निवासीयों को कम नही है।

आज भी तमाम देवी देवताओं का प्राचीन स्थान यहां विद्यमान है। गाँव के उत्तर झरही नदी के तट पर बसें श्री बिजय सुन्दरी भगवती माँ दुर्गे का प्राचीन स्थान है जिसका पर्यायवाची नाम 'बगलामुखी देवी' है। इस स्थान के चारो तरफ घना जंगल होने के कारण 'वन देवी' के नाम से भी यह स्थान प्रचलित है, जहां आये दिन श्रद्धालुओं की भीड़ जमी रहती है। और ऐसा विश्वास किया जाता है कि मुँह मांगी मुरादे पूरी होती है।

इस गाँव का क्षेत्रफल 1750 हेक्टेयर में फैला है, उत्तर में झरही नदी, गंण्डक नहर तथा तलाब एवं पोखरों से घिरा है आवागमन के लिए मात्र प्राईवेट बसें एवं नीजि साधन ही उपलब्ध है। यहां कि जनसंख्या 2001 की जनगड़ना के अनुसार 4750 है जिसमें 2550 पुरूष एवं 2200 महिलाएं शामिल है। जिसमें 1750 सामान्य वर्ग, 1825 पिछड़ा वर्ग, 1205 अनुसूचित जाति एवं 15 अनुसुचित जनजाति के सदस्य है। कुल हिन्दू परिवारों की संख्या 461 है जिसमें से 100 परिवार के विभिन्न जातियों के 100 उत्तरदाताओं का चयन दैव निदर्शन प्रणाली के माध्यम से किया गया है।

अनुभवात्मक परिप्रेक्ष्य

प्रस्तुत अध्ययन हिन्दू संस्कारों के बदलते स्वरूप कुशीनगर जनपद के गुरूवलिया गांव के हिन्दू परिवारों के विशेष संदर्भ में जानने का प्रयास किया गया है। साथ ही उत्तरदाताओं के सामजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक, जातिय तथा आय को एक चर के रूप में देखने का विनम्र प्रयास किया गया है। समाज के सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित रूप से चलाने के लिए हमारे मनीषियों ने मुख्य रूप से 13 संस्कारों को जीवन को परिशुद्ध एवं पवित्र बनाने के लिए स्पापित किया। आज हमारा समाज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है उपभोक्तावादी संस्कृति हावी है, जिसके परिणामस्वरूप संस्कारों में भी परिवर्तन हो रही है। यहां तक कि कुछ संस्कारों का स्वरूप ही समाप्त हो गया है और है भी तो परिवर्तत रूप में। यहां हम उत्तरदाताओं के उत्तर पर विभिन्न हिन्दू संस्कारों के बदलते स्वरूप का विश्लेषण करेंगें–

1 .गर्भाधान संस्कार के बदलते स्वरूप

यद्यपि प्रस्तुत प्रपत्र में अनुभवात्मक तथ्यों के आधार पर परिवर्तन के स्वरूप को देखने का प्रयास किया गया है। गर्भाधान संस्कार के बारे में मात्र 17.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ही गर्भाधान संस्कार परम्परागत रूप से मनाते है जबकि 83.00 प्रतिशत उत्तरदाता इस संस्कार को आधुनिक रूप से अपनाने के पक्ष में मत दिया है। और निम्न तालिका में प्राप्त विचारों का अवलोकन से पता चलता है कि गर्भाधान संस्कार के स्वरूपों या अपनाये जाने वाले तरीको में परिवर्तन हो रहा है–

सारिणी सं. 1

क्र. सं.	उत्तरदाताओं के विचार	विचार	प्रतिशत
1	धार्मिक दृष्ट्रिकोण के साथ समयावधि का ध्यान रखते है गर्भाधान मे	3	3.00
2	सुई, दवा, टानिक तथा विभिन्न प्रकार के टीके आदि का प्रयोग करते है	92	92.00
3	कोई उपाय नही करते है	5	5.00
योग		100	100.00

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि मात्र 3.00 प्रतिशत लोग ही गर्भाधान संस्कार में धार्मिक दृष्ट्रिकोण के साथ समयावधि के ध्यान रखते है जबकि 92.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं का स्पष्ट मानना है कि विभिन्न प्रकार के अत्याधुनिक साधनो का प्रयोग करते है जबकि 5.00 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे भी मिले जिनको गर्भाधान संस्कार के लिए कोई उपाय नही करते है। इस सारिणी से स्पष्ट है कि संदर्भित क्षेत्र में गर्भाधान संस्कार क्रमशः दिन–प्रतिदिन अपने स्वरूप को खोता जा रहा है और नवीन स्वरूप धारण कर रहा है।

2. पुंसवन संस्कार के बदलते स्वरूप

परम्परागत समय में जहाँ संस्कार एक निर्धारित परम्परा के अनुसार मनाया जाता था वही उसका स्वरूप उपभोक्तावादी संस्कृति से प्रभावित होकर बदल चुकी है। पुंसवन संस्कार जहाँ परम्परागत अवस्था में 2 माह से 8 माह के बीच मनाया जाता था, सम्बन्धित स्त्री ब्रत रखती थी, नया वस्त्र धारण करती थी तथा रात को गर्भवती स्त्री के नाक के दाहिने छिद्र में बरगद की छाल का रस डाला जाता था जिससे गर्भ नष्ट न हों और गर्भवती की गोद में पानी से भरा घड़ा रखा जाता था एवं पति स्पर्श कर बीर पुत्र की कामना करता था, वहीं आधुनिक युग में इसका स्वरूप बदल गया। इसके संदर्भ में उत्तरदाताओं से पुछा गया कि क्या आप पुंसवन संस्कार के बारे में जानते है तो इस सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण निम्न रहें–

सारिणी सं. 2.1

क्र. सं.	उत्तरदाताओं के विचार	विचार	प्रतिशत
1	हाँ	––	––
2	नहीं	100	100.00
योग		100	100.00

यदि नही तो?

सारिणी सं. 2.2

क्र. सं.	उत्तरदाताओं के विचार	विचार		प्रतिशत
		हाँ	नही	
1	क्या स्वस्थ्य पुत्र हेतु सुई, दवा, टानिक एवं टिका को प्रयोग करते है	100	––	100.00
2	क्या बिना इनके स्वस्थ पुत्र का जन्म संभव है	100	––	100.00
योग		100	––	100.00

उक्त दानों सारिणीयों को देखने से पता चलता है कि सारिणी सं. 2.1 में उत्तरदाताओं में 100. 00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माना कि हम पुंसवन संस्कार के बारे में जानते ही नही है। जबकि सारिणी सं. 2.2 में प्राप्त दत्तों पूछा गया कि यदि आप पुसंवन संस्कार के बारे में नही जानते ? तो क्या स्वस्थ्य पुत्र की प्रात्ति इस अत्याधुनिक दवा, टानिक और टिका के प्रयोग से संम्भव हैं 100.00 प्रतिशत उत्तरदाता स्वीकार करते है कि हाँ।

3. सीमांतोन्नयन संस्कार के बदलते स्वरूप

सीमांतोन्नयन संस्कार के बदलते स्वरूप को जानने के लिए जब उत्तरदाताओं से पूछा गया कि –क्या आप सीमांतोन्नयन संस्कार के बारे में जानते है? तो 100.00 प्रतिशत उत्तरदाता इसके विपक्ष मे विचार व्यक्त किया। वहीं दूसरी ओर पूछा गया कि– दुष्ट शक्तियों से रक्षा के लिए आपके परिवार में क्या किया जाता है? तो

सारिणी सं. 3

क्र. सं.	उत्तरदाताओं के विचार	विचार		प्रतिशत
		हाँ	नही	
1	सीमान्तोन्नयन संस्कार	––	––	––
2	हर माह डॉक्टरी जाँच	100	––	100.00
योग		100	––	100.00

उपरोक्त सारिणी में प्राप्त दत्तों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि दुष्ट शक्तियों से रक्षा के लिए 100.00 प्रतिशत उत्तरदाता हर माह डॉक्टरी जाँच कराते है। अतः यह संस्कार भी अपना परम्परागत स्वरूप छोडकर आधुनिक तौर–तरीके और सुविधाओं की प्रकृति को ग्रहण कर लिया है।

4. जातकर्म संस्कार के बदलते स्वरूप

जातकर्म संस्कार में नवजात शिशु को अनिष्टकारी प्रभावों से बचाने के लिए तमाम परम्परागत उपाय किये जाते थे किन्तु आज के उपभोक्तावादी संस्कृति के चलते ये भी अपना स्वरूप बदल रहे है । सर्वेक्षण के दौरान उत्तरदाताओ से पूछा गया कि– आपके परिवार में नवजात शिशु को अनिष्टकारी प्रभावों से बचाने के लिए कौन से उपाय अपनाये जाते है? तो इनके उत्तर निम्न सारिणी में व्यक्त है–

सारिणी सं. 4

क्र.सं.	अपनाये जाने वाले कार्य	आवृति	प्रतिशत
1	पिता नवजात शिशु को देखता है, सूघता है, आशिर्वाद का मंत्र पढ़ता है	––	––
2	सोने की सलाखा से मधु एवं घी चटाया जाता है	––	––
3	प्रसूति गृह के बाहर सात दिन तक आग जलाई जाती है	100	100.00
4	नाभि को छेदने हेतु प्रशिक्षित नर्स/मिडवाइफ बुलाई जाती है	13	13.00
5	नाभि छेदने हेतु अप्रशिक्षित और अशिक्षित दायी बुलाई जाती है	84	84.00
6	महिला डॉक्टर की सलाह पर शिशु को जन्मघुट्टी, शहद, माँ का दूध दिया जाता है	77	77.00
7	बच्चों की जीभ पर सोने की सलाई से ऊँ लिखा जाता है	––	––

उपर्युक्त सारिणी से स्पष्ट है कि जातकर्म संस्कार के कुछ ही तौर तरीकें अपने पूर्व स्थिति में मौजूद है। शेष विधि–विधान दिन–प्रतिदिन लुप्त होते जा रहे हैं। अतः स्पष्ट है कि जातकर्म संस्कार के स्वरूप में काफी बदलाव आया है।

5. नामकरण संस्कार के बदलते स्वरूप

परम्परागत रूप में जहाँ नामकरण प्राचीन रीति–रीवाजों, विधि–विधानों, कर्मकाण्डों के माध्यम से किया जाता था वहीं आधुनिक युग में उसका स्वरूप दिन–प्रतिदिन बदलता जा रहा है और लोग आधुनिक तौर तरीकों के आधार पर नामकरण कर रहें है। नामकरण संस्कार के सम्बंध में जब उत्तरदाताओं के विचार निम्न रहे–

सारिणी सं 4.1

क्र. सं.	कब	आवृति	प्रतिशत
1	दसवें दिन	––	––
2	बारहवें दिन	––	––
3	किसी भी शुभ तिथि नक्षत्र मुहूर्त में	23	23.00
4	कभी भी नामकरण कर लिया जाता	77	77.00
योग			

सारिणी सं. 4.2

क्र. सं.	कैसे	आवृति	प्रतिशत
1	बच्चें के नाम देवी–देवताओं के नाम पर हो	6	6.00
2	नेता, वैज्ञानिक, महापुरूष के नाम पर हो	12	12.00
3	फिल्मी सितारों, क्रिकेट खिलाड़ियों के नाम पर हो	44	44.00
4	टी.बी. के पात्रों के नाम अनुसार छोटा से छोटा हो	24	24.00
5	पण्ड़ित जी के ज्योतिष के अनुसार हो	14	14.00
योग		100	100.00

उपरोक्त सारिणीयों को देखने से पता चलता है कि अब नामकरण संस्कार की कोई समया सीमा निर्धारित नही रह गयी अब कभी भी नामकरण कर लिया जाता है तथा अधिकतर लोग अब देवी–देवताओं आदि के स्थान पर फिल्मी सितारों, खिलाड़ियों और टी.बी. एवं फिल्मी पात्रों के नाम पर बच्चों का नाम रखना पसन्द कर रहें है। जो परिवर्तन का स्पष्ट संकेत है।

6. निष्क्रमण संस्कार के बदलते स्वरूप

निष्क्रमण सस्कार के बदलते स्वरूप को जानने की कड़ी में उत्तरदाताओं से पूछा गया कि–क्या आपके परिवार में बच्चें का निष्क्रमण संस्कार होता है? उनका विचार निम्न सारिणी में रखा गया है–

सारिणी सं. 6.1

क्र. सं.	कैसे	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	22	22.00
2	नही	78	78.00
योग		100	100.00

यदि हाँ तो?

सारिणी सं. 6.2

क्र. सं.	कब	आवृति	प्रतिशत
1	जन्म के बारहवें दिन	––	––
2	जन्म के चौथै मास	––	––
3	कभी भी	22	22.00
योग		22	22.00

यदि नही तो? क्यों

सारिणी सं. 6.3

क्र. सं.	क्यों	आवृति	प्रतिशत
1	बच्चा अस्पताल में जन्म लेता है जो घर के बाहर होता है	78	78.00
2	इस संस्कार में विश्वास नही	––	––
योग		78	78.00

उपरोक्त सारिणी से स्पष्ट होता है कि निष्क्रमण संस्कार के पक्ष में मात्र 22.00 प्रतिशत उत्तरदाता ही ऐसे पाये गये जो परम्परागत ढ़ंग के पक्ष में है शेष उत्तरदाता आधुनिक तौर–तरीके के पक्ष में विचार दिया। जो स्पष्ट करता है कि निष्क्रमण संस्कार के पुराने ढ़ंग को आधुनिकता ने प्रभावित किया है तथा परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है।

7. अन्नप्रासन संस्कार के बदलते स्वरूप

संदर्भित अध्ययन के संदर्भ में अन्नप्रासन संस्कार के स्वरूप के बारे में पूछा गया कि आपके परिवार में मनाया जाता है तो इनके विचार निम्न रहे–

सारिणी सं. 7.1

क्र. सं.	अन्नप्रासन संस्कार आपके परिवार में किया जाता है	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	25	25.00
2	नही	75	75.00
योग		100	100.00

यदि हाँ तो?

सारिणी सं. 7.2

क्र.सं.	कब	आवृति	प्रतिशत
1	छः माह	17	17.00
2	आठ माह	8	8.00
योग		25	25

उपरोक्त सारिणीयों में प्राप्त विचार से स्पष्ट होता है कि मात्र 25.00 प्रतिशत उत्तरदाता ही अब उपरोक्त संस्कार को परम्परागत तरीके के मनाते है जबकि 75.00 प्रतिशत उत्तरदाता डाक्टरी सलाह के अनुसार ही अपने बच्चों को अन्न खिलाते है। जो आधुनिकता के कारण परिवर्तन के संकेत है।

8. चूडाकरण संस्कार के बदलते स्वरूप

उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्या आपके परिवार में चूडाकरण संस्कार होता है? तो निम्न सारिणी के अनुसार अपना उत्तर दिये–

सारिणी सं 8.1

क्र.सं.	उत्तर	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	100	100.00
2	नही	––	––
योग		100	100.00

उत्तरदाताओं के विचार से स्पष्ट होता है चयनित क्षेत्र में तमाम परिवर्तन के बावजूद भी चुड़ाकरण संस्कार अपने परम्परागत स्वरूप को बनाये हुए है।

9. कर्णछेदन संस्कार के बदलते स्वरूप

इस संस्कार के बदलते स्वरूप को जानने के लिए उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्या आपके परिवार में कर्णछेदन संस्कार अपनाये जाते है? तो इनका विचार निम्न रहा–

सारिणी सं. 9.1

क्र.सं.	अभिरूचि	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	100	100.00
2	नही	––	––
योग		100	100.00

यादि हाँ तो?

सारिणी सं. 9.2

क्र.सं.	(क) किसका	आवृति	प्रतिशत	(क) कब	आवृति	प्रतिशत	(ग) कौन करता है	आवृति	प्रतिशत
1	पुत्र का	––	––'	तीसरे वर्ष	56	56.00	नाई	––	––
2	पुत्री	100	100.00	पांचवे वर्ष	44	44.00	सुनार	100	100.00
3							घर वाले	––	––
4							अस्पताल में	––	––
योग		100	100.00	योग	100	100.00	योग	100	100.00

उपरोक्त सारिणी में प्राप्त दत्तो से पता चलता है कि जहाँ पुराने समय में पुत्र/पुत्री दोनों का कर्णछेदन किया जाता था परन्तु वर्तमान समय में केवल लड़कियों का ही कर्णछेदन हो रहा है। यह संस्कार तीन से पांच वर्ष या उससे भी अधिक या कम उम्र में सम्पन्न कर लिया जाता है यह कार्य पुर्ण रूप से केवल सुनार द्वारा ही सम्पन्न किया जा रहा है।

10. पट्टीपूजन संस्कार के बदलते स्वरूप

सर्वेक्षण के दौरान उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्या आपके परिवार में पट्टीपूजन संस्कार होता है तो निम्न प्रकार के विचार सामने आये

सारिणी सं. 10.1

क्र.सं.	अभिरूचि	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	––	––
2	नही	100	100.00
योग		100	100.00

यदि नही तो?

सारिणी सं.10.2

क्र.सं.	अभिरूचि	आवृति	प्रतिशत
क	बच्चा नर्सरी/कान्वेन्ट/शिशु विद्यालय में पहली बार लिखता है	88	88.00
ख	बच्चा पट्टी पर नही लिखता	5	5.00
ग	इस संस्कार पर हम विश्वास नही करते	7	7.00
योग		100	100.00

उपरोक्त सारिणी मे प्राप्त दत्तों से पता चलता है कि संदर्भित क्षेत्र में इस संस्कार का स्वरूप नर्सरी/कान्वेंट/शिशु विद्यालय ने ले लिया है। इससे स्पष्ट है कि यह संस्कार ने परम्परागत तौर–तरीके को त्यागकर नवीन आधुनिक तरीको को अपना लिया है। इस प्रकार यह संस्कार पूर्ण रूप से अपना स्वरूप बदल चूका है।

11. उपनयन संस्कार के बदलते स्वरूप

उपनयन संस्कार के स्वरूप में होने वाले परिवर्तन के बारे में जब उत्तरदाताओं से जानने का प्रयास किया गया तो पता चला कि यह संस्कार चुकि अभी भी अपनाये जा रहे है परन्तु इसका स्वरूप निःसंदेह परिवर्तित हो रहे है समय सीमा, धन का बन्दोबस्त तथा अपनाये जाने वाले तौर–तरीकों में काफी बदलाव आया है। इस संदर्भ में उत्तरदाताओं के विचार निम्न है–

सारिणी सं. 11.1

क्र.सं.	किस वर्ष में उपनयन होता है		आवृति	प्रतिशत
क	1	आठवें वर्ष	––	––
	2	ग्यारहवें वर्ष	34	34.00
	3	बारहवें वर्ष	15	15.00
	4	अन्य वर्ष	6	6.00
योग			**55**	**55.00**
ख	क्या आधुनिक विचार से प्रभावित होकर इस उपनयन संस्कार में बदलाव आया है?		100	100.00
	1	धन का बन्दोबस्त होने पर होता है	100	100.00
	2	बड़े भाई–बहन की शादी या किसी भाई के साथ होता है	100	100.00
	3	बरूआ पीले रंग का धोती के बजाय पैट/शर्ट/शुट पहनता है	100	100.00
	4	पीली टोपी की जगह अंग्रजी हैट लगाता है	100	100.00
	योग		**100**	**100.00**

उपरोंक्त सारिणी से पता चलता है कि उपनयन संस्कार भी अलग–अलग वर्णो मे इसके महत्व को तो स्वीकार करते है परन्तु अपनाये जाने वाले तौर–तरीको में परिवर्तन आया है। यह भी स्पष्ट रूप से दिखा कि केवल कुछ विशेष वर्ग में ही यह संस्कार अपनाये जा रहे है तथा इसका अब कोई सीमा नही निर्धारित किया जा सकता। जो परिवर्तन के स्पष्ट संकेत है।

12. विवाह संस्कार के बदलते स्वरूप

विवाह संस्कार के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं से पूछा गया कि आपके परिवार में विवाह के किस स्वरूप को अपनाया जाता है तो संदर्भित क्षेत्र में ब्रह्म विवाह तथा गांधर्व विवाह के पक्ष में ही अपना विचार प्रस्तुत किये। साथ ही इसके उद्देश्य के संदर्भ में उत्तरदाताओं के निम्न विचार रहे–

सारिणी सं. 12.1

क्र.सं.	विचार	आवृति	प्रतिशत
1	धार्मिक उद्देश्य	13	13.00
2	पुत्र प्राप्ति	17	17.00
3	रति यौन सुख	31	31.00
4	पारस्परिक सहयोग	39	39.00
योग		100	100.00

सारिणी सं. 12.2

क्र.सं.	अभिरूचि	आवृति	प्रतिशत
1	लज्जा होम	53	53.00
2	पाणिग्रहण	100	100.00
3	सप्तपदी	92	92.00

सारिणी सं. 12.3

क्र.सं.	अभिरूचि	आवृति		प्रतिशत	
		हाँ	नही	हाँ	नही
क	वर कन्या का जयमाल	82	18	82.00	18.00
ख	भवन की विद्युत सजावट	92	08	92	08.00
ग	बैण्ड आर्केसटा का प्रयोग	100	––	100	––
घ	संस्कार की समझ मे कमी	90	10	90.00	10.00
ड.	पारिग्रहण संस्कार से पूर्व मंच पर पारस्परिक अवलोकन	76	24	76.00	24.00
च	संस्कारों की उपेक्षा एवं कटौती	94	6	94.00	06.00
छ	कन्या का पर्दा रहित खुल्लम–खुल्ला विवाह	80	20	80.00	20.00
ज	पारंपरिक पोषाकों की जगह आधुनिक वर–कन्या का पोषाक	100	––	100.00	––
झ	पारंपरिक लोक गीतों की जगह आधुनिक फिल्मी गीतों पर अधारित गीत	100	––	100.00	––
ट	पारंपरिक लोक व्यवहार की जगह आधुनिक फिल्मी पैटर्न का बर्ताव	79	21	79.00	21.00
ठ	पारंपरिक भोजन की जगह आधुनिक लजीज मसालेदार, मांशाहारी भोजन का प्रयोग	100	––	100.00	––
ड	जमीन पर भोजन की जगह मेज कुर्सी पर भोजन करना	100	––	100.00	––
ढ़	पारंपरिक डोली की जगह कार का प्रयोग बधू की विदाई में	100	––	100.00	––
ण	विवाह में प्रयुक्त हरीश,ओखली,चुल्हा का प्रयोग कम	100	––	100.00	––
त	विदाई के समय कन्या का पैर पकड़ कर रोना	100	––	100.00	––
थ	विदाई के समय कन्या का पैर पकड़ कर रोना–भेटना कम	89	11	89.00	11.00

उपरोक्त सारिणी में प्राप्त दत्तों के अवलोकन से पता चलता है कि विवाह आज भी अपने परम्परागत संस्कारात्मक रूप धारण किये हुए है। परन्तु उसकों सम्पन्न करने के ढ़ंगों में परिवर्तन आया है और आधुनिक तौर–तरीकों के द्वारा आज भी यह संस्कार हमारे समाज में सम्पन्न किया जा रहा है।

13.अन्त्येष्टि संस्कार के बदलते स्वरूप

इस संस्कार के संदर्भ में शत् प्रतिप्रशत उत्तरदाताओं के परिवार में अपनाया जाता है। विकल्प के रूप में पूछा गया कि यह संस्कार परम्परागत रूप में सम्पन्न किया जाता है, आधुनिक रूप में सम्पन्न किया जाता है, या नही अपनाया जाता है जिसमें सभी उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि परम्परागत रूप से ही यह संस्कार मनाया जाता है। तत्पश्चात् यह भी जानने का प्रयास किया गया कि क्या आप निम्न कृत्यों से सहमत है तो उनका विचार निम्न रहें–

सारिणी सं.13

क्र.सं.	अभिरूचि	आवृति		प्रतिशत	
		सहमत	असहमत	सहमत	असहमत
1	अंतिम संस्कार शवदाह गृह में करना उचित है	86	14	86.00	14.00
2	ब्रह्मभोज में अत्यधिक व्यय–अपव्यय होता है	79	21	79.00	21.00
3	नदी में चिंता के राख बहाने से जल प्रदूषिण फैल रहा है	100	––	100.00	––
4	अंत्येष्टि संस्कार से प्रेतात्मा को मुक्ति मिलती है	34	66	34.00	66.00
5	पिण्ड दान से मृत व्यक्ति को मोक्ष प्राप्त होता है	21	79	21.00	79.00

अतः स्पष्ट है कि यह संस्कार चूकिं परम्परागत रूप से सम्पन्न हो रहा है परन्तु लोगों के विचार बदल रहे है सारिणी में प्राप्त दत्त यह संकेत दे रहे है कि शवदाह गृहों में अंतिम संस्कार करने के लिए इच्छुक है शायद इसकी वजह जलावन की लकड़ी की बेतहाशा कमी हो सकती है। यद्यपि यहाँ इस गाँव अथवा जनपद में किसी ने देखा नही है परन्तु इसके बारे में जानकारी है। इसी प्रकार बढ़ती महगांई ने ब्रह्मभोज के खर्चे की ओर लोगों को चिंतित किया है।

हिन्दू समाज में मूल्यात्मक परिवर्तन

वैज्ञानिक तार्किक दृष्ट्रिकोण एवं शिक्षा के परम्परागत धार्मिक आधार खण्डित होने लगे है। अब पुत्र प्रप्ति की कमना एवं धार्मिक उद्देश्य से गर्भाधान संस्कार अपना मूल्य परिवर्तित करके अब यौन सुख एवं मनोरंजन की उद्देश्य ही सर्वोपरि हो गया है। जातकर्म संस्कार के अनुष्ठानों, विधि–विधानों को आधुनिक नर्सिंग होम निगल चुके है। पुंसवन संस्कार में बरगद के छाल का रस माँ के नाक में डालने के बजाय पोलियों और डी.पी.टी. के टीके लगाये जा रहें है। सीमांतोनयन संस्कार में पत्नी के केश सवांरने के बजाय उसे मेडिकल चेकअप कराना श्रेयकर समझता है। अब नामकरण संस्कार में ग्रह–नक्षत्र–देवी–देवताओं के नाम पर रखने के बजाय फिल्मी हीरों–हीरोइनों या धारावाहिक के किसी पात्र का नाम या क्रिकेटर का नाम रखना लोग ज्यादा पसंद करते है। यहां तक कि जन्म कुण्डली भी कम्प्यूटर द्वारा बनायी जा रही है। बच्चें का जन्म नर्सिग होम में होगा तब निष्क्रमण संस्कार अपने आप ही निष्प्रभावी हो जायेगा। चूड़ाकरण सैलून में यदि हो भी जाय तो पट्टीपूजन एवं कर्णक्षेदन लोग भूल रहे है। उपनयन संस्कार के आवश्यक उपकरण पलाश का दण्ड, मृगचर्म अब कम दिखाई दे रहे है।

उपनयन संस्कार की उम्र सुविधानुसार लोग बढ़ाने लगे है। पीली धोती–कुर्ता और भिक्षा पात्र की जगह शूट और टाई में बटुक विडियोग्राफी के लिए लालायित दिखाई देने लगे है। विवाह संस्कार का उद्देश्य कुछ अंशो मे बाधित होने लगा है। वैदिक रीति से ब्रह्म विवाह को प्रश्रय मिलने लगा है। डॉ. इन्द्रजीत मिश्र[12] के अनुसार, आधुनिक शार्टकट का पण्डितों के सूर्योदय पर्यन्त उच्चारित होने वाले मंत्रों की गुज भला कौन सुने आर्केस्ट्रा और थिरकन पर झूम रहे होते है और प्रणय सूत्र बन्धन में बधनें वाले फोटों खिच अग्नि के समक्ष ली गयी शपथ का अर्थ ही नही सुनायी देता झूम रही सहेलियों धुनिक न्यू माँडल गाडियां द्वार की शोभा बढ़ाने लगी है, कहारों की डोली–पालक आम्र–पल्लव के वन्दनवार की जगह इलेक्ट्रिीकल बल्व ले चूके है। स्वच्छता–पवित्रता के साथ शाकाहारी भोजन संस्कारों में ग्रहण क ड़ल्ले से मांसाहार उदरस्त किया जा रहा है।

अतः स्पष्ट है के हिन्दू परिवारों पर भी आधुनिकता तथा उपभोक्तावाद संस्कृति बढ़ने लगे है जो संस्कारों में विवर्त के लिए उत्तरदायी या तो समाप्त होते जा रहे है विधि बदलत समाज को विचार कर यदि मिल जायेगें तो पाश्चात्य स रहा अपसंस्कृति का प्रचार र रही है कि नये संस्कार के कार्यतः लागू किया जाय जिससे

[redacted] वाराणसी, 1966, पृ. 1।
[redacted]–अप्रैल, 1962 संकलित सत्यि[redacted]
[redacted]
5. ,, [redacted], पृ. 32।
6. ,, : तदैव, पृ. 39।
7. ,, : तदैव, पृ. 350–351।
8. गौतम धर्म सूत्र : 8/24।
9. पाण्डेय : पूर्वोक्त।
10. पाण्डेय : तदैव, पृ. 49।
11. अखण्ड ज्योति : नवम्बर. 2000।
12. मिश्र, इन्द्रजीत : चित्ति, वार्षिक पत्रिका, एस.वी.एम. पी.जी.कालेज पावानगर, फाजिलनगर, 2003–2004।